# असफल स्कूल

**लेखक– जॉन होल्ट**

**समीक्षक– मो. इसरार**

**स्कूल को यह समझना होगा कि वह शिक्षा प्राप्त करने का एक साधन है, एकमात्र साधन नहीं। जॉन हॉल्ट का यह मानना है कि बच्चा जो सीखना चाहता है उसे वो स्वतंत्रता के साथ सीख सके, जो खोजना चाहता है उसे खोज सके।**

असफल स्कूल जॉन होल्ट द्वारा शिक्षा पद्धति पर लिखी गयी एक विचारणीय पुस्तक है जो कि कुछ संक्षिप्त पाठों में विभाजित है। यह हमें यह सोचने पर मजबूर करती है कि हम जिस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था बच्चों को दे रहे है, वह किस प्रकार के परिणाम दे रही है? जॉन होल्ट की पुस्तक के कुछ पाठों के विवरण का समावेश करते हुए, मै कुछ तथ्य उजागर करने की कोशिश करूंगा कि क्यों यह पुस्तक एक शिक्षक के लिए प्रासंगिक है, और कैसे यह पुस्तक एक शिक्षक को अपने कक्षा–कक्ष में पठन–पाठन में सकारात्मक बदलावों के लिए प्रेरित करती है।

बच्चे में अपने समाज को समझने व खुद को उसमें सक्षम बनाने के लिए एक अंदरूनी ललक होती है। बच्चा स्वयं यह प्रयास करता भी है, परन्तु शिक्षा व्यवस्था उसके स्वयं के प्रयासों को गौण बनाकर एक ऐसा बुना हुआ माहौल देती है, जिसमें उसे खुद को ढालना है। स्कूल को यह समझना होगा कि वह शिक्षा प्राप्त करने का एक साधन है, एकमात्र साधन नहीं जॉन हॉल्ट का यह मानना है कि बच्चा जो सीखना चाहता है उसे वो स्वतंत्रता के साथ सीख सके, जो खोजना चाहता है उसे खोज सके। विद्यालय को उसमे सीखने में सिर्फ मददगार की भूमिका निभानी चाहिए। बच्चों के सीखने के कौशल व कक्षा में सिखाने के तरीके में अंतर है जिसके कारण बच्चे सही समझ का निर्माण नहीं कर पाते। भाषा तथा उसका अर्थ व समझ निर्माण में सामंजस्य होना चाहिए। बच्चा सिर्फ सुनने और देखने के बजाय खुद करके सीखने व खोजने के द्वारा ज्यादा सीखता है। लेखक यहां पर अनुशासन भंग करने वाले बच्चों पर शारीरिक दंड के प्रावधान का विरोध करता है।

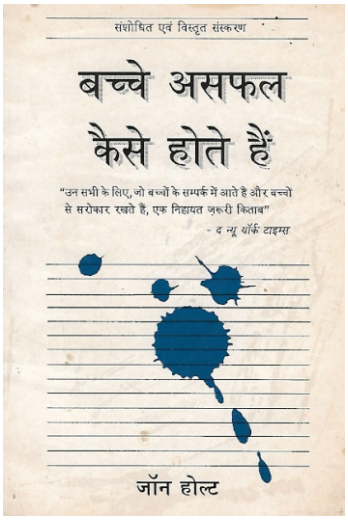


आज का शिक्षा तंत्र व सामाजिक व्यवस्था कुछ इस प्रकार है कि विद्यालय में अंक पाने की होड़ है। इसके कारण बच्चों पर अत्यधिक मानसिक व शारीरिक दबाव है। इसके चलते वास्तविक ज्ञान कहीं पीछे छूट जाता है। अधिक अंक व उच्च महाविद्यालयों में स्थान पाने की होड़ में उनकी रुचि व स्वतंत्रता की आहुति दे दी जाती है।

सीखने का एक बुनियादी पहलू यह भी है कि बच्चा खुद समझने की प्रक्रिया से गुजरे। मौजूदा शिक्षा व्यवस्था बच्चे को पहले से ही व्यवस्थित, सुसंगठित व क्रमिक निर्देशों का पालन करने के लिए बाध्य करती है। इससे समझ निर्माण की प्रक्रिया से बच्चे अछूते रहते हैं। बच्चे इस प्रकार के निर्देशों से धीरे–धीरे निष्क्रिय हो जाते हैं। बार–बार निर्देश बच्चों को उबाऊ और बोझिल लगते हैं। बच्चों ने कितना सीखा या उनके सीखने की गति व प्रगति को परीक्षण द्वारा आकलन एक ऐसी स्थिति बना देता है कि सीखने की क्रिया और प्रक्रिया केंद्र में ना होकर परीक्षण प्रमुख हो जाते हैं। परीक्षण छात्रों का वर्गीकरण करते हैं जिसमें छात्रों को बेहतर से लेकर नालायक की श्रेणी में रखा जाता है। परीक्षण में मात्र

अपने आपको बेहतर साबित करना ही उद्देश्य मात्र बन जाता है जिससे छात्र निरंतर दबाव में रहते हैं।

विद्यालय शिक्षा का वह केंद्र होना चाहिए जहां बच्चा स्वेच्छा, निर्भयता, आनंद और उत्साह के साथ विद्यालय आये कक्षा–कक्ष का वातावरण व गतिविधियां अधिक रोचक व उत्साहवर्धक होनी चाहिए। जिससे कि छात्र स्वेच्छा से प्रतिभाग करे विद्यालय का माहौल छात्रों का मनोबल बढ़ाने वाला होना चाहिए। ऐसा ना होने पर न केवल छात्रो पर दबाव बनता है बल्कि विद्यालय आने की रुचि भी दिन प्रतिदिन घटती है। रोजाना कक्षा में उपस्थित होने का कड़ा नियम बेझिल लगता व विरक्ति उत्पन्न करता है।

यदि सीखने के दौरान छात्रों के कुछ कड़वे अनुभव जुड़ जाएं तो यह बच्चों के लिए बहुत नकारात्मक सिद्ध होता है एवं पढ़ने और लिखने में बाधक सिद्ध होता है। कक्षा में पढ़ने व लिखने का ऐसा कृत्रिम माहौल बनाया गया है जिसमें स्वतंत्र विचारों व लेखन की छूट नहीं होती वरन एक ही घिसी–पिटी पटरी पर कार्य करने की नियमावली होती है। स्वतंत्र विचारों और चिंतन को निर्देशों की अवहेलना समझकर प्रताड़ित किया जाता है। इस समय की सबसे बड़ी चुनौती यह है कि बच्चों को इस प्रकार तैयार किया जाए कि वे किसी को नुकसान ना पहुंचायें परन्तु मौजूदा परम्परागत शिक्षा व्यवस्था में इस समस्या का हल मिलना मुश्किल है। हम अभी भी किसी के द्वारा ढाले गए या किसी और के विचारों से उपजे हुए विवेक से सोचकर किसी विशेष धर्म, समुदाय और जाति के आधार पर घृणा या द्वेष रखते हैं जिससे अंततः युद्ध के बीज बोये जाते हैं। हमारा सम्पूर्ण विश्व विविधताओं से भरा है। जाति, नस्ल, रंग, धर्म अलग होने के कारण भांति–भांति की संस्कृतियां हैं। इस विविधता में श्रेष्ठता को ढूंढ़ना या साबित करना समस्त समस्याओं की मूल जड़ है। इसी विविधता में अलग–अलग रंगों को स्वीकार करना व प्रेम और विश्वास का रिश्ता कायम करना ही मानवता है जिसे सीखना होगा। इसमें शिक्षा व्यवस्था की भूमिका अग्रणी है।

मुझे यह पुस्तक व्यक्तिगत तौर पर प्रेरक लगी जिसे अपनाकर एक शिक्षक के तौर पर कक्षाकक्ष का वातावरण सुधारा जा सकता है।

*(लेखक, अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन दिनेशपुर, ऊधमसिंह नगर से जुड़े हैं)*

## अनमोल अहसान

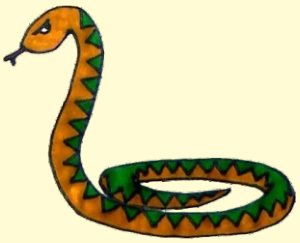

**शहर से दूर हरियाली के बीच एक गांव में मंगल नाम का चरवाहा रहता था। वह रोज अपनी बकरी को नदी के पास जंगल में चराने ले जाता था। पार जाते समय पुल पर खड़े होकर बहते पानी को देखने में मंगल को बड़ा मजा आता था। एक दिन मंगल ने पानी में घायल अजगर को बहते देखा तो उसने अजगर की जान बचाने के लिए पुल से नीचे एक रस्सी फेंक दी। रस्सी का सहारा पाकर अजगर किनारे लगा और एक पेड़ पर चढ़ गया। मंगल, अजगर की जान बचाकर बहुत खुश हुआ।**

**कुछ दिनों बाद मंगल दरांती से घास काट रहा था तो अचानक सामने अजगर को देखकर उसके होश उड़ गये। उसने मदद के लिए अवाज लगाई तो लोग इकटठे हो गये और देखा कि अजगर मंगल के पैरों के पास शांत होकर लेटा है। अजगर के शरीर पर चोट के निशान देखकर वह पहचान गया कि यह वही अजगर है जिसकी उसने जान बचाई थी। उस दिन से वो दोनों अच्छे मित्र बन गये थे। गांव वालों का डर भी दूर हो गया।**

*– मंजू राणा*
*सहायक अध्यापिका, राजकीय प्राथमिक विद्यालय, कंडोली, देहरादून*